*बैंकिंग क्षेत्र में स्पर्धा : अवसर और चुनौतियां**

रघुराम जी. राजन

नमस्कार ! श्री अशोक चावला, माननीय अतिथिगण, प्रेस के मेरे मित्रगण, देवियो और सज्जनो,

यह मेरे लिए बड़े सम्मान की बात है कि मुझे भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग के वार्षिक दिवस के अवसर पर व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया है। प्रतिस्पर्धा, आधुनिक अर्थव्यवस्था की जीवन-शक्ति है। यह पुराने और निष्प्रभावी तरीकों को हटा देती है और मूल्यवान परंपराओं को अक्षुण्ण रखती है। यह नवोन्मेष और ऊर्जावान को पुरस्कृत करती है और उन्हें दंडित करती है जो नाममात्र के लिए जुड़े रहते हैं, यह यथास्थिति की स्थिति को नष्ट करती है और युवा एवं बाहरी लोगों को नई उम्मीदें प्रदान करती है। प्रतिस्पर्धा यदि सही मायने में हो तो योजना बनाने की आवश्यकता नहीं होती है, जिस प्रकार से गुरुत्वाकर्षण जल को छोटे से छोटे मार्ग से निकल जाने की मदद करता है, उसी प्रकार से प्रतिस्पर्धा, अर्थव्यवस्था को अत्यधिक उत्पादकता के मार्ग पर ले जाने के लिए मार्गदर्शन प्रदान करती है।

स्वस्थ प्रतिस्पर्धा न केवल तरक्की करने का सर्वोत्तम मार्ग उपलब्ध कराती है बल्कि यह समस्त नागरिकों को साथ में लेकर चलने का सबसे अच्छा तरीका है; प्रतिस्पर्धा, बेचारी गृहिणी की सेवाओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए कौन-सा अच्छा तरीका है, के बजाय सेवा देने वालों को प्रोत्साहित करती है कि वे गृहिणी से पैसा हासिल करने के लिए प्रतिस्पर्धा करें? पिछड़ी जाति के सदस्य को ऊपर उठाने के लिए कौन-सा तरीका अच्छा है, बजाय इसके कि निजी नियोक्ता उसे एक अच्छी नौकरी देने के लिए आपस में स्पर्धा करें?

किंतु, समावेशी प्रतिस्पर्धा के माध्यम से स्वस्थ-विकास स्वतः ही नहीं पैदा हो जाता है। बिना हस्तक्षेप के, प्रतिस्पर्धा में जंगल राज होता है जहां छोटे, बड़ों की दया पर होते हैं। ऐसी प्रतिस्पर्धा केवल कुछ नामी लोगों को प्रोत्साहित करती है, जो केवल जंगल राज के आदी हैं बजाय ऐसी दुनिया को प्रोत्साहित करने के जिसमें हम सब रहते हैं। इसके विपरीत, स्वस्थ प्रतिस्पर्धा के लिए सरकार की सहायता चाहिए, यह सुनिश्चित करने के लिए कि खेल का मैदान समतल हो, प्रवेश पर बंदिशें कम हों, खेल के यथोचित नियम हों और संविदागत शर्तें स्पष्ट रूप से लागू हों और सभी सहभागियों में स्पर्धा करने के लिए बुनियादी योग्यता जैसे - शिक्षा और कौशल हो।

सरकार के लिए ऐतिहासिक रूप से इस प्रकार की स्वस्थ प्रतिस्पर्धा कायम करना कठिन रहा है क्योंकि इसके लिए सही-सही हस्तक्षेप की जरूरत है। सरकार कुछ अजीब तरीके से स्पर्धा का माहौल बनाने के लिए हस्तक्षेप की सीमा से आगे चली जाती है और बदले में अच्छी प्रतिस्पर्धा का वातावरण बनाने के बजाय यह निर्धारण करती है कि उनमें से कौन जीतता है और कौन हारता है। इस प्रकार का तरीका सही तरह काम नहीं करेगा। इस तरह की सावधानी के साथ भारत में स्वस्थ एवं अधिक प्रतिस्पर्धी माहौल पैदा करना भारत सरकार का भारत में मध्य अवधि में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। इस प्रयास में भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग की केंद्रीय खिलाड़ी के रूप में भूमिका होगी। चाहे वर्तमान सरकार के एकाधिकार पर प्रश्न करके अथवा निजी खिलाड़ियों की बाज़ार पर आवश्यकता से अधिक पकड़ को लेकर, आपकी संस्था की भूमिका आने वाले समय में प्रमुख होगी और मैं अपने देश के हित के लिए आपकी सफलता की कामना करता हूँ।

आज मैं बैंकिंग क्षेत्र में आने वाले दिनों में प्रतिस्पर्धी माहौल के बारे में ध्यान केंद्रित करूंगा। भारतीय रिज़र्व बैंक में हमने कुछ महीने इस बात पर चिंतन करने में खर्च किए हैं कि उसका आकार क्या होगा, और मैं उस विज़न को आपके साथ बांटना चाहता हूँ। मेरा आशय यह है कि बजाय इसके कि हम किसी अंतिम फैसले की घोषणा करें, इस संबंध में बहस को आगे बढ़ाया जाए।

महा सौदेबाज़ी

भारत में बैंकिंग क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा को दो बड़ी सौदेबाज़ी का उत्पाद माना जाता है। पहली, एक के बाद दूसरी सरकारों और बैंक के बीच, जिसमें बैंकों को कम लागत की मांग और मीयादी जमा रखने का सौभाग्य प्राप्त था, केंद्रीय बैंक की चलनिधि सुविधा तक पहुंच थी तथा स्पर्धा के कारण थोड़ी सुरक्षा भी प्राप्त थी, बदले में वे कुछ दायित्व स्वीकारते थे जैसे - सरकार को वित्त प्रदान करना (सांविधिक चलनिधि अनुपात के माध्यम से), मौद्रिक प्रसारण में सहायता प्रदान करना (प्रारक्षित नकदी निधि अनुपात या सीआरआर के माध्यम से), बैंकरहित क्षेत्रों में शाखाएं खोलकर और प्राथमिकता क्षेत्र को ऋण उपलब्ध करवाकर।

दूसरी बड़ी सौदेबाज़ी सरकारी क्षेत्र के बैंक और सरकार के बीच, जिसमें बैंकों ने सरकार के लिए विशेष सेवाएं प्रदान कर लिया

* डॉ. रघुराम जी. राजन, गवर्नर द्वारा भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग के वार्षिक दिवस पर 20 मई, 2014 को नई दिल्ली में दिया गया व्याख्यान।

और जोखिम मोल लिया और उन्हें इसकी क्षतिपूर्ति आंशिक रूप में इस प्रकार की गई कि सरकार, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पीछे खड़ी है। जैसे-जैसे भारत विकास कर रहा है, इन दोनों, सौदेबाजी पर दबाव बढ़ रहा है। और यह विकास और प्रतिस्पर्धा ही है जो उन्हें तोड़ रही है।

आज, अर्थव्यवस्था की निवेश की आवश्यकताएं, खास तौर पर बुनियादी ढांचे जैसे क्षेत्र में दीर्घकालीन निवेश की जरूरतें बढ़ गई हैं। सरकार इन क्षेत्रों में अब निवेश नहीं कर सकती है। निजी उद्यमियों से उसे हाथ में लेने के लिए कहा गया है। वित्तपोषण की गुंजाइश बनाए रखने के लिए सरकार को चाहिए कि वह बैंकिंग प्रणाली की पहले क्रय परिसंपत्तियों पर कम निर्भर रहे। लेकिन वित्तपोषण का स्वरूप भी बदल रहा है। निजी निवेश जोखिमपूर्ण है, इसलिए अधिक जोखिम उठाने वाला वित्तपोषण होना चाहिए जैसे कार्पोरेट बांड बाजार से तथा इक्विटी बाज़ार से। जैसे-जैसे वित्तपोषण के अधिक स्रोत पैदा होंगे, बैंकों के पास केवल कंपनियों और गृहस्थों के वित्तपोषण का एकाधिकार ही नहीं समाप्त होगा, बल्कि उन्हें अच्छे ग्राहक हासिल करने के लिए स्पर्धा करनी होगी, जिनकी घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में पहुंच होगीा।

इसी प्रकार, जमाराशियों का वित्तपोषण उतना सस्ता नहीं रह जाएगा, क्योंकि बैंकों को वित्तीय बाज़ार से और गृहस्थों की बचत के लिए वास्तविक परिसंपत्ति से स्पर्धा करनी होगी। जैसे-जैसे गृहस्थ परिमार्जित होते जा रहे हैं, वे बहुत अधिक धन कम ब्याज वाले खाते में रखने के इच्छुक नहीं होंगे। हाँ, गृहस्थ चलनिधि के एवज में कम ब्याज दरें स्वीकार करने के लिए तब भी तैयार होंगे। अतः, केंद्रीय बैंक की चलनिधि खिड़की बैंकों को इस बात की अनुमति देगी कि वे गृहस्थों को इस चलनिधि की सुरक्षित सेवा प्रदान करने का प्रस्ताव दे सकेंगे, किंतु नई भुगतान संस्थाएं तथा प्रौद्योगिकी के उत्पन्न हो जाने पर यह सुविधा भी समाप्त हो सकती है।

पहला महा सौदा - सरकार का वित्तपोषण करने के बदले में सस्ती जमाराशियां - को दोनों ओर से खतरा है, एक तो जमाराशियां सस्ती नहीं बनी रहेंगी, दूसरे यदि हमें आधुनिक उद्यमितावाली अर्थव्यवस्था चाहिए तो सरकार उतनी मात्रा में वित्तपोषण नहीं करती रहेगी जितना कि पहले करती रही है। यह एक और कारण है जिसकी वजह से विकास को आगे बनाए रखने के लिए राजकोषीय अनुशासन बनाए रखना मुख्य हो जाएगा।

यदि निजी क्षेत्र के बैंकों की तुलना में कोई खराब हालत में है तो वह हैं सरकारी क्षेत्र के बैंक, यही कारण है कि दूसरा सौदा भी खतरे में है। कम जोखिम वाले उद्यम जैसे ही वित्त की ज़रूरतें बाज़ार से हासिल करने लगेंगे, बैंकों के पास दो चीजें बचेंगी, एक बहुत बड़े जोखिम वाली बुनियादी ढांचे की परियोजनाएं और दूसरी लघु तथा मध्यम आकार की फर्मों को उधार उपलब्ध करवाना। इन जोखिमों को उठाने का विकल्प यह है कि बैंक अत्यधिक स्पर्धावाले फुटकर-उधार देने वाले बाज़ार में कूद पड़ें, खासतौर से यदि सरकार उन्हें बुनियादी ढांचे में उधार देने के लिए आग्रह करती है तो सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पास बहुत ही कम विकल्प बचेंगे।

आज, बहुत सी परियोजनाओं को वित्त दिया जा रहा है, किंतु उसके लिए परिमार्जित परियोजना मूल्यांकन कौशल और पूंजी-ढांचे को सावधानीपूर्वक बनाने की आवश्यकता है। उधार देने की सफलता इस बात में है कि समस्या का पहला संकेत मिलते ही उधारदाता को अपनी स्थिति सुरक्षित करने के लिए कार्रवाई करनी चाहिए अथवा सुस्त बैंकरों को दक्ष बैंकरों की तुलना में अथवा बेईमान प्रवर्तकों के कारण हानि उठाने के लिए प्रावधान करना पड़ेगा। उधार देने के बदलते कारोबारी माहौल में बने रहने के लिए सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पास मजबूत क्षमता होनी चाहिए, परियोजनाओं की सावधानीपूर्वक निगरानी करनी होगी तथा आवश्यकतानुसार समस्याओं को दूर करने के लिए शीघ्रता से कार्रवाई करनी होगी।

बीते दिनों में, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के पास सबसे अच्छी प्रतिभाएं हुआ करती थीं। लेकिन आज, पिछले दिनों में जो लोग लिए गए थे उनका लिया जाना ठप्प हो गया है जिससे उनकी मध्य प्रबंधन श्रेणी लगभग समाप्तप्राय सी हो गई है और निजी बैंकों ने भी सरकारी क्षेत्र के प्रतिभावान कार्मिकों को अपने यहां ले लिया है। सरकारी क्षेत्र के बैंकों में अपनी मौजूदा प्रतिभाओं को बनाए रखने तथा पार्श्विक भर्ती करने की योग्यता होनी चाहिए। लेकिन ऐसा करते समय उन्हें अपने कर्मचारियों को उनकी जिम्मेदारियों तथा काम करने की आज़ादी का वचन देने का सामर्थ्य होना चाहिए। दुर्भाग्य से, सरकारी क्षेत्र के बैंकों में कर्मचारियों के कार्य सरकार के नियमों द्वारा बाधित होते हैं और दूसरे सतर्कता प्राधिकारियों की अटकलों से, यहां तक कि उनके वेतन भी सीमित हैं। मैं बड़ी सख्ती से यह कहना चाहूंगा कि सरकारी क्षेत्र के बैंक प्रतिभा हासिल करने के लिए स्पर्धा करें। यदि, इसके अलावा, बैंक से कहा जाता है कि वे लोकहित को मानकर अपने आदर्श-निर्णय में कमी करें तो फिर उनका कार्यनिष्पादन पहले की तुलना में कहीं ज्यादा प्रभावित होगा। इससे उन्हें निधि जुटाना, विशेष रूप से पूंजी जुटाना मुश्किल हो जाएगा। चूंकि सरकार ने निधियों को कस रखा है, इसलिए सरकारी क्षेत्र के बैंकों की पूंजी आवश्यकताओं की मदद करने से संबंधित दूसरा बड़ा सौदा भी सवालों के घेरे में आने लगा है।

हम इन दोनों सौदों को बहाल करने के लिए पीछे नहीं जा सकते हैं - जिसका अर्थ हुआ कि विकास की प्रक्रिया को विपरीत दिशा में

ले जाना और प्रतिस्पर्धा के जिन्न को दबा देने जैसा होगा, ये दोनों बातें अर्थव्यवस्था के लिए वांछित नहीं हैं, भले ही उन्हें संभाव्य माना जाए। बल्कि इसके बजाय, मैं बहुत स्पष्ट रूप से कहना चाहूंगा कि सबसे अच्छा तरीका यह है कि वित्तीय क्षेत्र की स्पर्धा एवं विविधता बढ़ाते हुए विकसित होने दिया जाए, यहां तक कि बैंकों को, खासतौर से सरकारी क्षेत्र के बैंकों में स्पर्धा करने की अधिक कूवत पैदा की जाए।

बैंकिंग में बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा

भारतीय रिज़र्व बैंक, बैंकिंग क्षेत्र में खुला प्रवेश देने के लिए प्रतिबद्ध है। हमने अत्यधिक कड़ी जांच प्रक्रिया के बाद दो नये वाणिज्य बैंकों का लाइसेंस प्रदान की घोषणा हाल ही में की है। हम इस अनुभव का परीक्षण कर रहे हैं, और यथोचित परिवर्तन करते हुए नियमित रूप से लाइसेंस देने की प्रक्रिया की घोषणा करेंगे - जिसे हम लाइसेंस मांगिए और पाइये की संज्ञा देते हैं।

चूंकि लोगों का बैंकों पर बहुत भरोसा है और पूरी दुनिया में जमाराशि पर बीमा किया जा रहा है, इसलिए हमें सामान्य वाणिज्य बैंक लाइसेंस देते हुए सावधान रहना है। आवेदकों की क्षमता और निष्ठा दोनों के प्रति पूरी तरह आश्वस्त होने पर ही हम केवल उन्हीं को लाइसेंस प्रदान करते हैं जिनका रिकार्ड अच्छा है और जिनके पास पर्याप्त पूंजी है। लेकिन उन लोगों के बारे में क्या जिनका रिकॉर्ड अच्छा नहीं है, निधि का आधार बड़ा नहीं है किंतु उनके पास क्षमता खूब है? और उन लोगों के संबंध में क्या जो बैंकिंग कारोबार के एक हिस्से को जैसे भुगतान के कार्य को करना चाहते हैं ?

भारतीय रिज़र्व बैंक नये खिलाड़ियों को छोटा बैंक खोलने या बैंकिंग कारोबार के केवल एक खंड का काम करने के लिए लाइसेंस प्रदान करने का मौका दे सकता है। इस प्रकार के विविध स्वरूप के लाइसेंस - जिनमें भौगोलिक सीमा की पाबंदी होगी अथवा, नये बैंक द्वारा पेश किए जाने वाले उत्पादों पर पाबंदी होगी - से और अधिक संगठनात्मक विविधता एवं क्षमता पैदा होगी। छोटे बैंक स्थानीय आवश्यकताओं के साथ-साथ लघु एवं मध्यम आकार के कारोबार को बेहतर सेवा प्रदान कर सकेंगे। भुगतान बैंक, जमाराशियां स्वीकार करेगा और भुगतान का कार्य करेगा तथा विप्रेषण (रेमिटेंस) सेवाएं प्रदान करेगा किंतु उसपर बाध्यता होगी कि वह अपनी समस्त निधियों को सुरक्षित लिखत जैसे सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करे। ऐसा करने से अन्य मौजूदा सेवाओं को बहुत सहयोग प्राप्त होगा। उदाहरण के लिए प्रस्तावित डाकघर बैंक को भुगतान बैंक के रूप में शुरू किया जा सकता है जो अपने डाकघरों का उपयोग जमाराशियां जुटाने और भुगतान करने के लिए कर सकते हैं।

किसी नये ढांचे की मुख्य बात यह है कि उसमें मध्यस्थता की संभावना नहीं होगी जो मौजूदा बैंकिंग प्रणाली को नुकसान पहुंचा रही है। आज, एक कमर्शियल बैंक स्वयं को भुगतान बैंक के रूप में बदल सकता है जिसके लिए उसे 100 प्रतिशत एसएलआर मार्जिन रखनी होगी। निश्चित रूप से, बैंक ऐसा करना नहीं चाहेगा, क्योंकि वे कार्पोरेट जगत को उधार देकर अधिक पैसा कमाना चाहेगा, लेकिन इस संभावना का संकेत यह है कि विनियमन, भुगतान बैंक की अनुचित तरफदारी नहीं करेगा। हमारे कुछ साथियों का मानना है कि भुगतान बैंक फायदेमंद नहीं होगा, वहीं कुछ का मानना है कि यह नियमित रूप से कार्य कर रहे वाणिज्य बैंकों से बैंकिंग कारोबार की मलाई को उतार लेगा। हम या तो इस मुद्दे पर लम्बे समय तक बहस करते रहें, या फिर प्रयोग के तौर पर कुछ भुगतान बैंकों को अनुमति प्रदान करे तथा उनके निष्पादन पर निगरानी रखें। भारतीय रिज़र्व बैंक का प्रस्ताव है कि वह इस संबंध में हितधारकों से आगे के कदम के बारे में चर्चा करेगा।

यदि भुगतान बैंक सफल रहते हैं तो, इससे जो दायित्व हम वाणिज्य बैंकों पर लगाते हैं उसमें धीरे-धीरे कमी आएगी। उदाहरण के लिए, जब भुगतान बैंक चलनिधि के प्रयोजन से सरकारी प्रतिभूति अपने पास रखेंगे, तब हम वाणिज्य बैंकों से एसएलआर के एक हिस्से के रूप में सरकारी प्रतिभूति रखने की मात्रा कम कर सकते हैं।

जहां तक बैंक दायित्व के मुद्दे का सवाल है, उसमें कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें अन्य वित्तीय संस्थाओं की तुलना में भुगतान बैंक फायदे में नहीं रहेंगे - जैसे दीर्घकाल के लिए धन जुटाना और उधार देना। यह खासतौर से बुनियादी ढांचे के लिए महत्वपूर्ण है, जिसमें बैंकों को प्रारंभिक चरण के निर्माण कार्य के लिए वित्त प्रदान करना अनिवार्य होता है। चूंकि निर्माण कार्य 5-7 वर्ष तक चलता रहता है, इसलिए बैंक को इस प्रयोजन से दीर्घकाल हेतु धन जुटाने में समर्थ रहना चाहिए। किंतु, यदि वे इस धन को आज जुटाते हैं, तो उसपर तुरंत सीआरआर और एसएलआर की अपेक्षाएं लागू हो जाती हैं और यदि उसमें से कोई राशि उधार देते हैं तो उसपर प्राथमिकता क्षेत्र की शर्तें भी लागू हो जाती हैं। जिस सीमा तक बैंक दीर्घकालीन बांड जुटाते हैं और उनका इस्तेमाल बुनियादी ढांचे को वित्त प्रदान करने के लिए करते हैं, क्या हम उन्हें इस दायित्व से मुक्त कर सकते हैं ? ऐसा होने से वे तुरंत दीर्घकालीन बुनियादी ढांचे को सीधे देने वाली अन्य वित्तीय संस्थाओं जैसे बीमा कंपनियों और वित्त कंपनियों के समकक्ष हो जाएंगे।

संभवतः प्राथमिकता क्षेत्र का दायित्व हमारे जैसे विकासशील देश में कुछ और समय तक आवश्यक बना रहेगा, हालांकि इस बात पर हमें और अधिक विचार-विमर्श करने की जरूरत है कि जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था विकसित होगी, कौन-कौन से क्षेत्र प्राथमिकता क्षेत्र के अंतर्गत आएंगे। लेकिन इस अत्यधिक विरोधाभासी बहस में जाने से पहले क्या हम बैंकों को वर्तमान मानदंडों को और भी कुशलता से पूरा करने की अनुमति दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक बैंक ग्रामीण उधार देने में अधिक कुशल है, तो क्या वह अपने दायित्वों से अधिक हासिल कर सकता है और अपने बेशी को क्या ऐसे बैंक को 'बेच' सकता है जो दायित्व को नहीं पूरा कर पाया है ? हम इस संभावना की जांच कर रहे हैं।

अंतिम बात, यदि हम समावेशन को अधिदेश के रूप में देखें तो हमने अभी तक बहुत कम सफलता प्राप्त की है। बैंक कई बार दूर-दराज के इलाके में शाखा खोलते हैं लेकिन स्टाफ के रूप में जो अधिकारी वहां दिए जाते हैं वे स्थानीय लोगों से संपर्क नहीं करते हैं, बैंकों ने सादा खाते (नो-फ्रिल अकाउंट) खोले लेकिन उनमें से अधिकांश निष्क्रिय पड़े हुए हैं। वास्तविकता यह है कि यदि अधिदेश लाभप्रद नहीं है तो बैंक उनसे बचने के लिए रास्ता ढूंढ लेते हैं। सभी प्रकार के समावेशन को लाभप्रद नहीं बनाया जा सकता है, लेकिन हमें बैंकों को यह आज़ादी देनी चाहिए कि वे नये तरीके आजमाएं, शायद अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर करें जो सेवारहित क्षेत्र के अंतिम मील तक, जहां आवश्यक हो, सेवा दे सकें। भारतीय रिज़र्व बैंक शीघ्र ही कारोबार प्रतिनिधि के संबंध में नई रियायतें जारी करेगा। साथ ही, कुछ संस्थाएं जो भुगतान बैंक बन गई हैं वे इसे समर्थन देने में अत्यधिक उपयुक्त साबित होंगी अथवा वाणिज्य बैंक के एवज में कार्य करेंगी और दूर-दराज इलाकों तक पहुंचेंगी।

संक्षेप में, हम जहां बैंकिंग क्षेत्र में स्पर्धा बढ़ा सकते हैं, वहीं बैंकों पर दायित्व का बोझ कम करते हुए उन्हें मज़बूत बना सकते हैं। इस प्रकार वे वहनीय विकास में अपना योगदान दे सकेंगे, यहां तक कि पहला बड़ा सौदा टूट जाने के बाद भी।

सरकारी क्षेत्र के बैंकों को स्पर्धा करने से मुक्त करना

अब हम सरकारी क्षेत्र के बैंकों के बारे में बात करेंगे। आज, पूरे विश्व में और भारत में सुव्यवस्थित सरकारी क्षेत्र के बैंक कार्य कर रहे हैं। इसलिए सरकारी क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा बढ़ाने के लिए निजीकरण किया जाना जरूरी नहीं है। लेकिन, जैसाकि डॉ.पी.जे.नायक समिति ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि अधिकांश सरकारी क्षेत्र के बैंकों की कार्यप्रणाली बेहतर बनाने के लिए भारत में अभिशासन, प्रबंधन में परिवर्तन तथा परिचालनगत एवं क्षतिपूर्ति संबंधी लचीलापन लाने की सख्त जरूरत है।

सरकारी क्षेत्र के बैंकों में सुधार लाने के लिए अनेक अच्छे एवं व्यावहारिक सुझाव दिए गए हैं जैसे - सरकार एवं सरकारी क्षेत्र के बैंकों के शेयरों को धारित करने के लिए एक होल्डिंग कंपनी बनाना, सरकारी क्षेत्र के बैंकों के मुख्य कार्यपालक अधिकारियों (सीईओ) की अवधि बढ़ाना, अध्यक्ष और सीईओ के पद को अलग-अलग करना, बैंक के बोर्डों में अधिक स्वतंत्र प्रोफेशनल्स को लाया जाना और बोर्डों को सीईओ के चयन का कार्य सौंपकर उन्हें सशक्त बनाना, ऐसे मामलों को अधिक छांटकर लेना जिनका अनुवर्तन सतर्कता जांच के लिए किया जाना है।

हमें इन युक्तियों (आइडियाज) को जांचने की आवश्यकता है, इसमें से बहुत सी ऐसी हैं जो सरकारी क्षेत्र के बैंकों के लिए लचीला बनने में सहायक होंगी जिससे वे नये वातावरण में स्पर्धा कर सकेंगे। हमें यह याद रखना होगा कि न केवल राष्ट्र की बहुत बड़ी दौलत दांव पर लगी है जिसका प्रतिनिधित्व सरकारी क्षेत्र के बैंक करते हैं, बल्कि हमारी अर्थव्यवस्था का भावी वित्त-पोषण और निवेश भी दांव पर है।

यदि सरकारी क्षेत्र के बैंक प्रतिस्पर्धी बन जाएं, और विशेष रूप से यदि वे अपने 'सरकारी' चरित्र की बलि दिए बिना सरकार के प्रभाव से स्वयं को दूर रख सकें, तो वे बाज़ार से धन बहुत आसानी से जुटा सकते हैं। वस्तुतः, अच्छे, काम करने वाले ज्यादा धन जुटा सकेंगे, न कि मौजूदा हालात की तरह जहां अच्छा काम न करने वाले सरकारी जेब पर अधिक निर्भर हैं। प्रतिस्पर्धा से उनकी कुशलता बढ़ेगी और फिर दूसरा बड़ा सौदा भी अप्रारंभिक हो जाएगा।

समापन

बैंकिंग क्षेत्र एक क्रांतिकारी परिवर्तन के मुहाने पर है, अगले कुछ वर्षों में, मुझे आशा है कि हम और अधिक विविधतापूर्ण बैंकिंग संस्थाएं देखेंगे जो सूचना और प्रौद्योगिकी का पूरी तरह से इस्तेमाल करेंगी, एक स्वस्थ सरकारी क्षेत्र बैंकिंग प्रणाली होगी, सरकारी प्रभाव से दूर होगी किंतु सरकारी प्रयोजनों से नज़दीक, गहन और चलनिधिपूर्ण वित्तीय बाज़ार होंगे जो न केवल प्रतिस्पर्धा करेंगे बल्कि बैंकों को सहारा प्रदान करेंगे। यदि हमें वास्तविक अर्थव्यवस्था की बृहत् आवश्यकताओं को वित्त प्रदान करना है तो फिर इस प्रकार के विज़न की न केवल संभावना है बल्कि इसकी अनिवार्यता है। चूंकि भारत एक मज़बूत और वहनीय विकास के मार्ग पर अग्रसर है, इसलिए रिज़र्व बैंक का यह दृढ़ विश्वास है कि भारतीय बैंकिंग क्षेत्र उसके मार्ग में प्रत्येक इंच पर सहायता प्रदान करने वाला भागीदार रहेगा।